26

क्रोध

मन के किसी विकार को भाव कहते हैं। मानव-मन में कुछ भाव अज्ञात रूप से विद्यमान होते हैं, जो अनुकूल अवसर पाकर अपने आप पैदा होते और दबते रहते हैं, जैसे– प्रेम, हास्य, शोक, उत्साह और वैराग्य आदि। मानव के यही विविध भाव रस कहलाते हैं। साहित्य में वर्णित नौ रसों की उत्पत्ति इन्हीं भावों के आधार पर होती है। क्रोध एक प्रमुख भाव है। सुप्रसिद्ध लेखक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने क्रोध की उत्पत्ति, उसके कारण, प्रकार, लाभ और उसकी हानियों का वर्णन कर उसका मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत किया है। आइए, अब इस विचारात्मक निबंध 'क्रोध' की विशेष जानकारी प्राप्त करें।

उद्देश्य

इस निबंध को पढ़ कर आप

- क्रोध के विभिन्न पक्षों का विवेचन कर सकेंगे;
- क्रोध के सकारात्मक-नकारात्मक पक्षों की पहचान कर सकेंगे;
- क्रोध की उत्पत्ति, कारण और उपयोगिता पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- कारण-अकारण क्रोध करने से होने वाली हानियों का उल्लेख कर सकेंगे;
- अतिक्रोध पर विवेकपूर्वक अंकुश लगाने के लाभ बता सकेंगे;
- साहित्यिक, ललित तथा व्यंग्य शैली में लिखे निबंधों से इस विचारात्मक निबंध की शैली को अलग कर सकेंगे;
- निबंध के चरणों के आधार पर 'क्रोध' नामक विचारात्मक निबंध की विवेचना कर सकेंगे;
- शुक्ल जी के निबंधों की तत्समबहुला भाषा और सूत्र-शैली की व्याख्या कर सकेंगे।

क्रियाकलाप

क्रोध में हम अपना आपा खो बैठते हैं। हमारा व्यवहार कुछ अनुचित-सा हो जाता है, जैसे– ज़्यादा खाने लगते हैं, आवाज़ ऊँची हो जाती है, चिल्लाने लगते हैं या तोड़-फोड़ भी कर सकते हैं। अब कभी क्रोध आए तो ऐसा कीजिए–

- अपने इस आचरण पर गौर कीजिए।
- गुस्से में आप क्या-क्या करते हैं, उसे अपनी डायरी में नोट कीजिए।
- आपको गुस्सा क्यों आया, गुस्सा कैसे बढ़ा, कब शांत हुआ, क्यों शांत हुआ, क्या नुकसान हुआ आदि इसका आत्मविश्लेषण कीजिए।
- दूसरे की जगह स्वयं को रखकर स्थिति को परखिए।
- अब विचार कीजिए कि क्या क्रोध के बिना काम नहीं हो सकता था।
- इस प्रकार की सकारात्मक सोच स्वभाव को परिपक्व बनाती है। क्रोध आने पर उसे वहीं रोका जा सकता है। क्रोध पर नियंत्रण करने के सबके अलग-अलग अनुभव होते हैं, जैसे कोई पानी पीता है, कोई घटना स्थल से दूर चला जाता है आदि–इस बारे में अपने मित्रों से बातचीत कीजिए।

अब आइए, रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित 'क्रोध' के मूल-पाठ का एक बार वाचन कर जाएँ।

26.1 मूलपाठ

क्रोध

क्रोध दुःख के चेतन कारण के साक्षात्कार या अनुमान से उत्पन्न होता है। साक्षात्कार के समय दुःख और उसके कारण के संबंध का परिज्ञान आवश्यक है। तीन-चार महीने के बच्चे को कोई हाथ उठाकर मार दे, तो उसने हाथ उठाते तो देखा है पर अपनी पीड़ा और उस हाथ उठाने से क्या संबंध है, यह वह नहीं जानता है। अतः वह केवल रोकर अपना दुःख मात्र प्रकट कर देता है। दुःख के कारण की स्पष्ट धारणा के बिना क्रोध का उदय नहीं होता। दुःख के सज्ञान कारण पर प्रबल प्रभाव डालने में प्रवृत्त करवाने वाला मनोविकार होने के कारण क्रोध का आविर्भाव बहुत पहले देखा जाता है। शिशु अपनी माता की आकृति से परिचित हो जाने पर ज्यों ही यह जान जाता है कि दूध इसी से मिलता है, भूखा होने पर वह उसे देखते ही अपने रोने में कुछ क्रोध का आभास देने लगता है।

सामाजिक जीवन में क्रोध की ज़रूरत बराबर पड़ती है। यदि क्रोध न हो तो मनुष्य दूसरों के द्वारा पहुँचाए जाने वाले बहुत से कष्टों की चिरनिवृत्ति का उपाय ही न कर सके। कोई मनुष्य किसी दुष्ट के नित्य दो-चार प्रहार सहता है। यदि उसमें क्रोध का विकास नहीं हुआ है तो वह केवल आह-ऊह करेगा, जिसका उस दुष्ट पर कोई प्रभाव नहीं। उस दुष्ट के हृदय में विवेक, दया आदि उत्पन्न करने में बहुत समय लगेगा। संसार किसी

शब्दार्थ

चेतन – जिसमें सोचने-समझने की शक्ति हो
साक्षात्कार – सामने दिखाई देने वाला
परिज्ञान – विशेष ज्ञान
धारणा – बोध या विचार
सज्ञान – ज्ञान युक्त
मनोविकार – मन में पैदा होने वाले भाव
आविर्भाव – पैदा होना
चिरनिव त्ति – सदा के लिए समाप्त होना।
प्रहार – चोट

टिप्पणी

को इतना समय ऐसे छोटे-छोटे कामों के लिए नहीं दे सकता। भयभीत होकर प्राणी अपनी रक्षा कभी-कभी कर लेता है, पर समाज में इस प्रकार प्राप्त दुःख निवृत्ति चिरस्थायिनी नहीं होती। हमारे कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि क्रोध करने वाले के मन में सदा भावी कष्ट से बचने का उद्देश्य रहा करता है। कहने का अभिप्राय केवल इतना ही है कि चेतना-सृष्टि के भीतर क्रोध का विधान इसीलिए है।

चित्र 26.1

जिससे एक बार दुःख पहुँचा, पर उसके दोहराए जाने की संभावना कुछ भी नहीं है, जो कष्ट पहुँचाया जाता है वह प्रतिकार मात्र है; उसमें रक्षा की भावना कुछ भी नहीं रहती। अधिकतर क्रोध इसी रूप में देखा जाता है। एक-दूसरे से अपरिचित दो आदमी रेल पर चले जा रहे हैं। इनमें से एक को आगे ही के स्टेशन पर उतरना है। स्टेशन तक पहुँचते-पहुँचते बात-ही-बात में एक ने दूसरे को तमाचा जड़ दिया और उतरने की तैयारी करने लगा। अब दूसरा मनुष्य भी यदि उतरते-उतरते उसे एक तमाचा लगा दे तो यह उसका बदला या प्रतिकार ही कहा जाएगा, क्योंकि उसे फिर उसी व्यक्ति से तमाचा खाने का कुछ तो निश्चय नहीं था। जहाँ और दुःख पहुँचाने की कुछ भी संभावना होगी, वहाँ क्रुद्ध प्रतिकार न होगा, उसमें स्वरक्षा की भावना भी मिली होगी।

हमारा पड़ोसी कई दिनों से नित्य आकर हमें दो-चार टेढ़ी-सीधी सुना जाता है, यदि हम एक दिन उसे पकड़ कर पीट दें तो हमारा यह कर्म शुद्ध प्रतिकार न कहलाएगा क्योंकि हमारी दृष्टि नित्य गालियाँ सहने के दुःख से बचने के परिणाम की ओर भी समझी जाएगी। इन दोनों दृष्टांतों को ध्यानपूर्वक देखने से पता लगेगा कि दुःख से उद्विग्न होकर दुःखदाता को कष्ट पहुँचाने की प्रवृत्ति दोनों में है; पर एक में वह परिणाम आदि का विचार बिल्कुल छोड़े हुए है और दूसरे में कुछ लिए हुए। इनमें से पहले दृष्टांत का क्रोध उपयोगी नहीं दिखाई पड़ता। पर क्रोध करने वाले के पक्ष में उसका उपयोग चाहे न हो पर लोक के भीतर वह बिल्कुल खाली नहीं जाता। दुःख पहुँचाने वाले से हमें फिर दुःख पहुँचने का डर न सही, पर समाज को तो है। इससे उसे उचित दंड दे देने से पहले तो उसी की शिक्षा या भलाई हो जाती है, फिर समाज के और लोगों के बचाव का बीज भी बो दिया जाता है। यहाँ पर भी वही बात है कि क्रोध के समय लोगों के मन में लोक-कल्याण की यह व्यापक भावना सदा नहीं रहा करती। अधिकतर तो ऐसा क्रोध प्रतिकार के रूप में ही होता है।

यह कहा जा चुका है कि क्रोध दुःख के चेतन कारण साक्षात्कार या परिज्ञान में होता है, अतः एक तो जहाँ कार्य-कारण के संबंध ज्ञान में त्रुटि या भूल होती है, वहाँ क्रोध धोखा देता है। दूसरी बात यह है कि क्रोध करने वाला जिस ओर से दुःख आता है उसी ओर देखता है, अपनी ओर नहीं। जिसने दुःख पहुँचाया है उसका नाश हो या उसे दुःख पहुँचे, क्रुद्ध का यही लक्ष्य होता है। न तो वह यह देखता है कि मैंने कुछ

शब्दार्थ

दुःख निव त्ति	–	दुःख का समाप्त होना।
चिरस्थायिनी	–	सदा बने रहने वाली
भावी	–	भविष्य में होने वाला
स ष्टि	–	संसार, जगत
विधान	–	व्यवस्था
प्रतिकार	–	बदला
स्वरक्षा	–	अपनी रक्षा
टेढ़ी-सीधी	–	बुरी-भली
द ष्टांतों	–	उदाहरणों
उद्विग्न	–	व्यग्र, दुःखी, बेचैन
प्रव त्ति	–	भावना
व्यापक	–	विस्त त, फैली हुई
त्रुटि	–	कमी, भूल
क्रुद्ध	–	क्रोध करने वाला
परिमित	–	सीमित
विवेक	–	अच्छे-बुरे का ज्ञान
उग्र	–	तेज़, प्रचंड
अंकुश	–	रोक लगाना,
अनर्थ	–	गलत अर्थ
व्याकुल	–	दुःखी

किया है या नहीं, और न इस बात का ध्यान करता कि क्रोध के वेग में मैं जो कुछ करूँगा उसका परिणाम क्या होगा। यही क्रोध का अंधापन है। इसी से एक तो मनोविकार ही एक-दूसरे को परिमित किया करते हैं, ऊपर से बुद्धि या विवेक भी उन पर अकुंश रखता है। यदि क्रोध इतना उग्र हुआ कि मन में दुःखदाता की शक्ति के रूप और परिणाम के निश्चय, दया, भय आदि और भावों के संचार तथा उचित-अनुचित के विचार के लिए जगह ही न रही तो बड़ा अनर्थ खड़ा हो जाता है, जैसे यदि कोई सुने कि उसका शत्रु बीस-पच्चीस आदमी लेकर उसे मारने आ रहा है और वह चट क्रोध से व्याकुल होकर बिना शत्रु की शक्ति का विचार और अपनी रक्षा का पूरा प्रबंध किए उसे मारने के लिए अकेले दौड़ पड़े, तो उसके मारे जाने में बहुत कम संदेह समझा जाएगा। अतः कारण के यथार्थ निश्चय के उपरांत, उसका उद्देश्य अच्छी तरह समझ लेने पर ही आवश्यक मात्रा और उपयुक्त स्थिति में ही क्रोध वह काम दे सकता है जिसके लिए उसका विकास होता है।

क्रोध की उग्र चेष्टाओं का लक्ष्य हानि या पीड़ा पहुँचाने के पहले आलंबन में भय का संचार करना रहता है। जिस पर क्रोध प्रकट किया जाता है वह यदि डर जाता है और नम्र होकर पश्चात्ताप करता है तो क्षमा का अवसर सामने आता है। क्रोध का गर्जन-तर्जन क्रोधपात्र के लिए भावी दुष्परिणाम की सूचना है, जिससे कभी-कभी उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है और दुष्परिणाम की नौबत नहीं आती। एक की उग्र आकृति देख दूसरा किसी अनिष्ट व्यापार से विरत हो जाता है या नम्र होकर पूर्वकृत दुर्व्यवहार के लिए क्षमा चाहता है। बहुत से स्थलों पर क्रोध का लक्ष्य किसी का गर्व चूर्ण करना मात्र रहता है अर्थात् दुःख का विषय केवल दूसरे का गर्व या अहंकार होता है। अभिमान दूसरों के मन में या उसकी भावना में बाधा डालता है, उससे वह बहुत से लोगों को यों ही खटका करता है। लोग जिस तरह हो सके– अपराध द्वारा, हानि द्वारा – अभिमानी को नम्र करना चाहते हैं। अभिमान पर जो रोष होता है उसकी प्रवृत्ति अभिमानी को केवल नम्र करने की रहती है; उसको हानि या पीड़ा पहुँचाने का उद्देश्य नहीं होता। संसार में बहुत से अभिमान का उपचार अपमान द्वारा ही हो जाता है।

चित्र 26.2

कभी-कभी लोग अपने कुटुंबियों या स्नेहियों से झगड़कर क्रोध में अपना ही सिर पटक देते हैं। यह सिर पटकना अपने को दुःख पहुँचाने के अभिप्राय से नहीं होता, क्योंकि बिल्कुल बेगानों के साथ कोई ऐसा नहीं करता। जब किसी को क्रोध में अपना ही सिर पटकते या अंग-भंग करते देखें तब समझ लेना चाहिए कि उसका क्रोध ऐसे व्यक्ति के ऊपर है जिसे उसके सिर पटकने की परवा है अर्थात् जिसे उसका सिर फूटने से उस समय नहीं तो आगे चलकर दुःख पहुँचेगा।

क्रोध का वेग इतना प्रबल होता है कि कभी-कभी मनुष्य यह भी विचार नहीं करता कि

शब्दार्थ

उपरान्त	– बाद
आलम्बन	– भाव का कारण
पश्चात्ताप	– पछतावा
गर्जन-तर्जन	– गरजना और डाँटना
दुष्परिणाम	– बुरा फल
उग्र आकृति	– क्रोधपूर्ण मुख-मुद्रा
अनिष्ट व्यापार	– बुरे काम
विरत	– ध्यान हटाना, रुकना
पूर्वकृत	– पहले किया हुआ
दुर्व्यवहार	– बुरा आचरण
चूर्ण करना	– खत्म करना, चूर-चूर करना
रोष	– क्रोध
उपचार	– उपाय
कुश	– सूखी घास
अपरिष्कृत	– अशुद्ध, असभ्य
अन्तःप्रकृति	– स्वभाव
अव्यवस्था	– अस्थिरता
फुर्तीला	– तेज, चुस्त

टिप्पणी

जिसने दुःख पहुँचाया है, उसमें दुःख पहुँचाने की इच्छा थी या नहीं। इसी से कभी तो यह अचानक पैर कुचल जाने पर किसी को मार बैठता है और कभी ठोकर खाकर कंकड़-पत्थर तोड़ने लगता है। चाणक्य ब्राह्मण अपना विवाह करने जा रहा था। मार्ग में कुश उसके पैर में चुभे। वह चट मट्ठा और कुदाली लेकर पहुँचा और कुशों को उखाड़कर उनकी जड़ों में मट्ठा देने लगा। एक बार मैंने देखा कि एक ब्राह्मण देवता चूल्हा फूँकते-फूँकते थक गए। जब आग न जली तब उस पर क्रोध करके चूल्हे में पानी डाल किनारे हो गए। इस प्रकार का क्रोध अपरिष्कृत है। यात्रियों ने बहुत से ऐसे जंगलियों का हाल लिखा है जो रास्ते में पत्थर की ठोकर लगने पर बिना उसको चूर-चूर किए आगे नहीं बढ़ते। अधिक अभ्यास के कारण यदि कोई मनोविकार बहुत प्रबल पड़ जाता है, तो यह अंतःप्रकृति में अव्यवस्था उत्पन्न कर मनुष्य को बचपन से मिलती-जुलती अवस्था में ले जाकर पटक देता है।

क्रोध सब मनोविकारों से फुर्तीला है, इसी से अवसर पड़ने पर यह और मनोविकारों का भी साथ देकर उसकी तुष्टि का साधक होता है। कभी वह दया के साथ कूदता है, कभी घृणा के। एक क्रूर कुमार्गी किसी अनाथ अबला पर अत्याचार कर रहा है। हमारे हृदय में उस अनाथ अबला के प्रति दया उमड़ रही है। पर दया की अपनी शक्ति तो त्याग और कोमल व्यवहार तक होती है। यदि वह स्त्री अर्थकष्ट में होती तो उसे कुछ देकर हम अपनी दया के वेग को शांत कर लेते पर यहाँ तो उस अबला के दुःख का कारण मूर्तिमान तथा अपने विरुद्ध प्रयत्नों को ज्ञानपूर्वक रोकने की शक्ति रखने वाला है। ऐसी अवस्था में क्रोध ही उस अत्याचारी के दमन के लिए उत्तेजित करता है जिसके बिना हमारी दया ही व्यर्थ जाती। क्रोध अपनी इस सहायता के बदले में दया की वाहवाही को नहीं बँटाता। काम क्रोध करता है, पर नाम दया का ही होता है। लोग यही कहते हैं कि 'उसने दया करके बचा लिया', कोई यह नहीं कहता कि 'क्रोध करके बचा लिया'। ऐसे अवसरों पर यदि क्रोध दया का साथ न दे तो दया अपनी प्रवृत्ति के अनुसार परिणाम उपस्थित ही नहीं कर सकती।

क्रोध शांति भंग करने वाला मनोविकार है। एक का क्रोध दूसरे में भी क्रोध का संचार करता है। जिसके प्रति क्रोध प्रदर्शन होता है वह तत्काल अपमान का अनुभव करता है और इस दुःख पर उसकी भी त्योरी चढ़ जाती है। यह विचार करने वाले बहुत थोड़े निकलते हैं कि हम पर जो क्रोध प्रकट किया जा रहा है वह उचित है या अनुचित। इसी से धर्म, नीति और शिष्टाचार तीनों में क्रोध के निरोध का उपदेश पाया जाता है। संत लोग तो खलों के वचन सहते ही हैं, दुनियादार लोग भी न जाने कितनी ऊँची-नीची पचाते रहते हैं। सभ्यता के व्यवहार में भी क्रोध नहीं तो क्रोध के चिह्न दबाये जाते हैं। इस प्रकार का प्रतिबंध समाज की सुख-शांति के लिए बहुत आवश्यक है। पर इस प्रतिबंध की भी सीमा है। यह परपीड़कोन्मुख क्रोध तक नहीं पहुँचता।

क्रोध के निरोध का उपदेश अर्थपरायण और धर्मपरायण दोनों देते हैं। पर दोनों में जिसे अति से अधिक सावधान रहना चाहिए वही कुछ भी नहीं रहता। बाकी रुपया वसूल करने का ढंग बतानेवाला चाहे कड़े पड़ने की शिक्षा दे भी दे, पर धज के साथ धर्म की ध्वजा लेकर चलने वाला धोखे में भी क्रोध को पाप का रूप ही कहेगा। क्रोध रोकने का अभ्यास ठगों और स्वार्थियों को सिद्धों और साधकों से कम नहीं

शब्दार्थ

तुष्टिसाधक	– संतोष देने वाला
नम्र	– विनम्र, बिना अभिमान का
अर्थकष्ट	– धन का अभाव
दमन (करना)	– दबाना
उत्तेजित करना	– उकसाना
तत्काल	– उसी समय
त्योरी चढ़ना	– क्रोधित होना
शिष्टाचार	– सभ्य आचरण
निरोध	– रोकना
खलों	– दुष्टों
ऊँची-नीची पचाना	– भली-बुरी बातें सहना
प्रतिबंध	– रोक
परपीड़कोन्मुख	– दूसरे को पीड़ा देने की ओर बढ़ा हुआ
अर्थपरायण	– धन में लगा
धर्मपरायण	– धर्म में लगा
धज	– सुंदर रंगढंग मजबूत शरीर,
ध्वजा	– झंडा

टिप्पणी

होता। जिससे कुछ स्वार्थ निकलना रहता है, जिसे बातों में फँसाकर ठगना रहता है, उसकी कठोर और अनुचित बातों पर न जाने कितने लोग ज़रा भी क्रोध नहीं करते, पर उसका यह अक्रोध न धर्म का लक्षण है, न साधन।

क्रोध के प्रेरक के दो प्रकार के दुःख हो सकते हैं अपना दुःख और पराया दुःख। जिस क्रोध के त्याग का उपदेश दिया जाता है वह पहले प्रकार के दुःख से उत्पन्न क्रोध है। दूसरे के दुःख पर उत्पन्न क्रोध बुराई की हद के बाहर समझा जाता है। क्रोधोत्तेजक दुःख जितना ही अपने संपर्क से दूर होगा, उतना ही लोक में क्रोध का स्वरूप सुंदर और मनोहर दिखाई देगा। दुःख से आगे बढ़ने पर कुछ दूर तक क्रोध का कारण थोड़ा-बहुत अपना ही दुःख कहा जा सकता है; जैसे, अपने या आत्मीय परिजन का दुःख, इष्ट-मित्र का दुःख। इसके आगे भी जहाँ तक दुःख की भावना के साथ कुछ ऐसी विशेषता लगी रहेगी कि जिसे कष्ट पहुँचाया जा रहा है वह हमारे ग्राम, पुर, देश का रहने वाला है, वहाँ तक हमारे क्रोध से सौंदर्य की पूर्णता में कुछ कसर रहेगी। जहाँ उक्त भावना निर्विशेष रहेगी वहीं सच्ची परदुःखकातरता मानी जाएगी, वहीं क्रोध के स्वरूप को पूर्ण सौंदर्य प्राप्त होगा; ऐसा सौंदर्य जो काव्यक्षेत्र के बीच भी जगमगाता आया है।

यह क्रोध करुणा के आज्ञाकारी सेवक रूप में हमारे सामने आता है। स्वामी से सेवक कुछ कठिन होते ही हैं, उनमें कुछ अधिक कठोरता रहती ही है। पर यह कठोरता ऐसी कठोरता को भंग करने के लिए होती है जो पिघलनेवाली नहीं होती। क्रौंच के वध पर वाल्मीकि मुनि के करुण क्रोध का सौंदर्य एक महाकाव्य का सौंदर्य हुआ। उक्त सौंदर्य का कारण है निर्विशेषता। वाल्मीकि के क्रोध के भीतर प्राणिमात्र के दुःख की सहानुभूति छिपी है—राम के क्रोध के भीतर संपूर्ण लोक के दुःख का क्षोभ समाया हुआ है। क्षमा जहाँ से श्रीहत् हो जाती है, वहीं से क्रोध के सौंदर्य का आरंभ होता है। शिशुपाल की बहुत-सी बुराइयों तक जब श्रीकृष्ण की क्षमा पहुँच चुकी तब जाकर उसका लौकिक लावण्य फीका पड़ने लगा और क्रोध की समीचीनता का सूत्रपात हुआ। अपने ही दुःख पर उत्पन्न क्रोध में या तो हमें तत्काल क्षमा का अवसर या अधिकार ही नहीं रहता अथवा वह अपना प्रभाव खो चुकी रहती है।

बहुत दूर तक और बहुत काल से पीड़ा पहुँचाते चले आते हुए किसी घोर अत्याचारी का बना रहना ही लोक की क्षमा की सीमा है। इनके आगे क्षमा न दिखाई देगी, नैराश्य, कायरता और शिथिलता छाई दिखाई पड़ेगी। ऐसी गहरी उदासी की छाया के बीच आशा, उत्साह और तत्परता की प्रभा जिस क्रोधाग्नि के साथ फूटती दिखाई पड़ेगी, उसके सौंदर्य का अनुभव सारा लोक करेगा। राम का कालाग्नि-सदृश क्रोध ऐसा ही है। वह सात्विक तेज है; तामस ताप नहीं।

दंड कोप का ही एक विधान है। राजदंड राजकोप है, और लोककोप धर्मकोप है। जहाँ राजकोप धर्मकोप से एकदम भिन्न दिखाई पड़े, वहाँ उसे राजकोप न समझकर कुछ विशेष मनुष्यों का कोप समझना चाहिए। ऐसा कोप राजकोप के महत्त्व और पवित्रता का अधिकारी नहीं हो सकता। उसको समान जनता अपने लिए आवश्यक नहीं समझ सकती।

वैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है। जिससे हमें दुःख पहुँचता है उस पर यदि हमने क्रोध किया और यह क्रोध हमारे हृदय में बहुत दिनों तक टिका रहा तो वह वैर कहलाता

शब्दार्थ

प्रेरक	– आगे बढ़ाने वाला
क्रोधोत्तेजक	– क्रोध को बढ़ाने वाला
पुर	– नगर
निर्विशेष	– समान, भेदभाव रहित
परदुःखकातरता	– दूसरे के दुःख से व्याकुल होने की भावना
श्रीहत्	– शोभा रहित
समीचीनता	– ठीक होना, उपयुक्त होना
नैराश्य	– निराशा
क्षोभ	– क्रोध मिश्रित दुख
सूत्रपात	– प्रारंभ
लावण्य	– सौंदर्य
शिथिलता	– कमजोरी
कालाग्नि	– म त्यु के समान
सद श	– भयंकर
सात्विक	– पवित्र
तामस	– अज्ञानयुक्त, बुरा
कोप	– क्रोध
विधान	– व्यवस्था, उपाय
लोककोप	– संसार का क्रोध
राजकोप	– राजा का क्रोध

टिप्पणी

है। इस स्थायी रूप में टिक जाने के कारण क्रोध का वेग और उग्रता तो धीमी पड़ जाती है; पर लक्ष्य को पीड़ित करने की प्रेरणा बराबर बहुत काल तक हुआ करती है। क्रोध अपना बचाव करते हुए शत्रु को पीड़ित करने की युक्ति आदि सोचने का समय प्रायः नहीं देता, पर वैर उसके लिए बहुत समय देता है। पूछिए तो क्रोध और वैर का भेद केवल कालकृत है। दुःख पहुँचाने के साथ ही दुःखदाता को पीड़ित करने की प्रेरणा करने वाला मनोविकार क्रोध और कुछ काल बीत जाने पर प्रेरणा करने वाला भाव वैर है। किसी ने आपको गाली दी। यदि आपने उसी समय मार दिया तो आपने क्रोध किया। मान लीजिए कि वह गोली देकर भाग गया और दो महीने बाद आपको कहीं मिला। अब यदि आपने उससे बिना फिर गाली सुने मिलने के साथ ही उसे मार दिया तो यह आपका वैर निकालना हुआ। इस विवरण से स्पष्ट है कि वैर उन्हीं प्राणियों में होता है जिनमें धारणा अर्थात् भावों के संचय की शक्ति होती है। पशु और बच्चे किसी से वैर नहीं मानते। चूहे और बिल्ली के संबंध को 'वैर' नाम आलंकारिक है। आदमी का न आम-अंगूर से कुछ वैर है न भेड़-बकरे से। पशु और बच्चे दोनों क्रोध करते हैं और थोड़ी देर के बाद भूल जाते हैं।

क्रोध का एक हल्का रूप है चिड़चिड़ाहट, जिसकी व्यंजना प्रायः शब्दों ही तक रहती है। इसका कारण भी वैसा उग्र नहीं होता। कभी-कभी चित्त व्यग्र रहने, किसी प्रवृत्ति में बाधा पड़ने या किसी का ठीक सुभीता न बैठने के कारण ही लोग चिड़चिड़ा उठते हैं। ऐसे सामान्य कारणों के अवसर बहुत अधिक आते रहते हैं, इसमें चिड़चिड़ाहट स्वभावगत होने की संभावना बहुत अधिक रहती है। किसी मत, संप्रदाय या संस्था के भीतर निरूपित आदर्शों पर ही अनन्य दृष्टि रखने वाला बाहर की दुनिया देख-देखकर अपने जीवन पर चिड़चिड़ाते चले जाते हैं। जिधर निकलते हैं, रास्ते भर मुँह बिगड़ा रहता है। चिड़चिड़ाहट एक प्रकार की मानसिक दुर्बलता है, इसी से रोगियों और बुड्ढों में अधिक पाई जाती है। इसका स्वरूप उग्र और भयंकर न होने से यह बहुतों के विशेषतः बालकों के – विनोद की एक सामग्री भी हो जाती है। बालकों को चिड़चिड़े बुड्ढों को चिढ़ाने में आनंद आता है और कुछ विनोदी बुड्ढे भी चिढ़ने की नकल किया करते हैं। कोई 'राधाकृष्ण' कहने से, कोई 'सीताराम' पुकारने से और कोई 'करेले' का नाम लेने से चिढ़ता है और अपने पीछे लड़कों की एक खासी भीड़ लगाए फिरता है। जिस प्रकार लोगों को हँसाने के लिए कुछ लोग मूर्ख या बेवकूफ बनाते हैं उसी प्रकार चिड़चिड़े भी। मूर्खता मूर्ख को चाहे रुलाए पर दुनिया को तो हँसाती ही है। मूर्ख हास्यरस के बड़े प्राचीन आलंबन हैं। न जाने कब से इस संसार की रुखाई के बीच हास्य का विकास कराते चले आ रहे हैं। आज भी दुनिया को हँसाने का हौसला बहुत कुछ उन्हीं की बरकत से हुआ करता है।

चित्र 26.3

शब्दार्थ

युक्ति	– उपाय
कालकृत	– समय से किया हुआ
व्यंजना	– प्रकट होना
सुभीता	– सुविधाजनक
निरूपित	– जिसकी विस्तृत आलोचना हो चुकी है
अनन्य	– एकनिष्ठ, पूरी, तरह से
आलंबन	– आश्रय
बरकत	– सामर्थ्य
असह्यता	– सहन न करने की भावना
क्षोभयुक्त	– क्रोध मिश्रित दुःख से पूर्ण
अमर्ष	– वह दुःख या द्वेष जो विपक्षी या शत्रु का कोई अपकार या बुरा न कर सकने पर पैदा हो।

किसी बात का बुरा लगना, उसकी असह्यता का क्षोभयुक्त और आवेगपूर्ण अनुभव होना, अमर्ष कहलाता है। पूर्ण क्रोध की अवस्था में मनुष्य दुःख पहुँचाने वाले पात्र की ओर ही उन्मुख रहता है। उसी को भयभीत या पीड़ित करने की चेष्टा में प्रवृत्त रहता है। अमर्ष में दुःख पहुँचाने वाली बात के ब्योरों पर और उसकी असह्यता पर विशेष ध्यान रहता है। इसकी ठीक व्यंजना ऐसे वाक्यों में समझनी चाहिए– 'तुमने मेरे साथ यह किया, वह किया, अब तक तो मैं सहता आया, अब नहीं सह सकता।' इसके आगे बढ़कर जब कोई दाँत पीसता और गरजता हुआ कहने लगे कि ''मैं तुम्हें धूल में मिला दूँगा, तुम्हारा घर खोदकर फेंक दूँगा'' तब क्रोध का पूर्ण स्वरूप समझना चाहिए।

26.2 बोध प्रश्न

आशा है आपने पूरे निबंध को एक बार पढ़ लिया होगा और पढ़ते समय आए कठिन शब्दों के अर्थ भी आपने समझ लिए होंगे। अब नीचे लिखे प्रश्नों के उचित विकल्प चुनकर सही उत्तर के सामने सही का निशान (√) लगाइए–

1. क्रोध की उत्पत्ति का कारण है –
   (क) बच्चे द्वारा यह देखा जाना कि कोई उसे मारना चाहता है।
   (ख) व्यक्ति का यह अनुभव कि उसकी रक्षा कोई नहीं कर रहा।
   (ग) दुःख के चेतन कारण का साक्षात्कार या अनुमान।
   (घ) मनुष्य द्वारा क्रोध को जन्मसिद्ध अधिकार मानना।

2. सामाजिक स्थिति में क्रोध एक आवश्यक भाव है, क्योंकि इससे –
   (क) बहुत से स्वार्थ पूरे होते हैं।
   (ख) बहुत से कष्टों को सहन किया जा सकता है।
   (ग) अन्तःप्रकृति में अव्यवस्था उत्पन्न की जा सकती है।
   (घ) बहुत से कष्टों की चिरनिवृत्ति का उपाय होता है।

3. बदले की भावना या प्रतिकार में–
   (क) अपनी रक्षा की भावना रहती है।
   (ख) परोपकार की भावना होती है।
   (ग) दुःख दुहराए जाने की संभावना नहीं होती।
   (घ) परम आनंद की प्राप्ति होती है।

4. रिक्त स्थान की उपयुक्त शब्द से पूर्ति कीजिएः
   (क) जहाँ कार्य-कारण के संबंध ज्ञान में .....होती है, वहाँ क्रोध धोखा देता है। (बुराई/सच्चाई/त्रुटि)
   (ख) अधिकतर तो .....प्रतिकार के रूप में ही होता है। (आनंद/प्रेम/क्रोध)

(ग) क्रोध शांति .....मनोविकार है। (प्रदान करने वाला/भंग करने वाला)

(घ) क्रोध के निरोध का उपदेश .....और ..... दोनों देते हैं। (साधु, संत/अर्थपरायण, धर्मपरायण)

5. क्रोध अंधा होता है, क्योंकि–

(क) उसकी आँखें नहीं होतीं।

(ख) इसमें परिणाम की चिंता नहीं होती।

(ग) वह बहुत परोपकारी होता है।

(घ) वह चल नहीं सकता।

6. जब क्रोध हमारे हृदय में बहुत दिनों तक टिका रहता है तो वह

(क) वैर कहलाता है। (ग) अपने आप शांत हो जाता है।

(ख) अमर्ष कहलाता है। (घ) चिड़चिड़ाहट बन जाता है।

7. क्रोध के प्रेरक दुःख हैं–

(क) क्रुद्ध का हाथ-पैर पटकना।

(ख) क्रुद्ध का पत्थरों को चूर-चूर करना।

(ग) क्रुद्ध का अपना और पराया दुःख।

(घ) क्रुद्ध का आग न जलने पर पानी डालना।

26.3 आइए समझें

अंश-1

हम आशा करते हैं कि निबंध की विषय-वस्तु से अब आपका पूरा परिचय हो चुका है। आप पहले पढ़ चुके हैं कि किसी भी विचारप्रधान निबंध के मुख्य रूप से तीन भाग हैं – भूमिका या प्रस्तावना, विषय-सामग्री तथा उपसंहार। 'क्रोध' निबंध में भी लेखक रामचंद्र शुक्ल ने विस्तार से इन तीनों भागों का क्रमबद्धता से वर्णन किया है। आइए, अब विस्तार से इनकी जानकारी प्राप्त करें।

प्रस्तावना

लेखक ने 'क्रोध' निबंध का प्रारंभ क्रोध के कारण का पता लगाने से किया है। लेखक के अनुसार क्रोध मनुष्य के हृदय में स्थित वह भाव है, जो दूसरे के द्वारा सताए जाने पर या इच्छा के अनुकूल काम न करने पर अपने-आप पैदा हो जाता है। इसके लिए कार्य-कारण संबंध स्पष्ट दिखाई देता है। जैसे हम भूख से व्याकुल शिशु को रोते हुए देखकर कितना भी चुप कराने की कोशिश करें परंतु वह माँ के गोद में जाते ही चुप हो जाता है, क्योंकि उसे मालूम है कि अब उसकी भूख शांत हो जाएगी। इसलिए

टिप्पणी

क्रोध में कार्य-कारण संबंध सदैव रहता है। शिशु को भी ज्ञान है कि भूख लगने पर क्रोध करने से उसे माँ से ही दूध मिलेगा। यही कारण है कि अन्य व्यक्तियों के चुप कराने की कोशिश बेकार सिद्ध होती है।

कई बार क्रोध उसी समय परिस्थिति से उत्पन्न किसी कारण से भी पैदा हो जाता है, जो अपनी रक्षा करने के लिए न होकर बदले की भावना से होता है। जैसे लेखक ने रेल से उतरने वाले दो अपरिचितों के परस्पर तमाचा मारने वाले उदाहरण से स्पष्ट किया है।

जीवन में क्रोध की आवश्यकता भी होती है। जैसे आपने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए बने नरम दल और गरम दल के विषय में अवश्य सुना होगा। अंग्रेज़ों के अत्याचारों के सामने घुटने टेकना या उनसे दया और ममता की आशा करना कठिन हो गया था। कंस और रावण के उदाहरण भी इस संबंध में दिए जा सकते हैं। इनके साथ-साथ कृष्ण और राम को अनेक अत्याचारियों का वध करना पड़ा था। इसका मूल कारण क्रोध ही था। दुष्ट के हृदय में अच्छे और बुरे कामों को पहचानने की शक्ति या सहनशीलता अथवा दया आदि नहीं होती, इसलिए उसके अत्याचारों के बढ़ जाने पर अपनी रक्षा और समाज को उनके अन्याय से बचाना ज़रूरी हो जाता है। इसके लिए सशक्त का क्रोध करना स्वाभाविक है, चाहे वह स्वयं के लिए हो या पूरे समाज का उससे लाभ होता हो। इनमें से वह क्रोध अधिक सुंदर और उपयोगी होगा, जिसमें अपने-पराए का भेद न होकर सच्ची परदुःखकातरता हो।

विषय-वस्तु

अब तक आप क्रोध के कार्य-कारण ज्ञान और उसकी आवश्यकता से परिचित हो चुके हैं। आप जान चुके हैं कि अपनी रक्षा और समाज के उपकार के लिए भी क्रोध करना ज़रूरी होता है।

आप स्वयं कई बार अनुभव करते हैं कि क्रोध करने वाला व्यक्ति कारण और परिणाम को बिना सोचे लाल-पीला हो अकेले ही कई शत्रुओं पर टूट पड़ता है। इसमें उसकी अपनी पराजय ही है, समाज भी उसका साथ नहीं देता। इसी को क्रोध का अंधापन कहते हैं। जब कोई परिणाम को विचार किए बिना, अपनी सामर्थ्य को आँके बिना योजना बनाए बिना, विपक्षी पर टूट पड़े तो उसकी असफलता निश्चित ही है। वह किसी सिनेमा का 'हीरो' नहीं, जो अकेले ही दस-पंद्रह पहलवानों को पछाड़ दे। वास्तविक जगत में ऐसा नहीं होता। इसलिए ऐसी स्थिति में क्रोध पर संयम रखना ज़रूरी हो जाता है। परिस्थिति को देखते हुए यदि बुद्धि का प्रयोग कर क्रोध न करें तो भयंकर परिणाम से बच सकते हैं। आप रामायण में भी देखते हैं कि श्रीराम ने लंका पर अकस्मात् ही चढ़ाई नहीं की। उसके लिए पहले पूरी योजना बनाई, सेना एकत्र की, समुद्र पर पुल बनाया फिर योजनाबद्ध तरीके से रावण-वध किया और विजय प्राप्त की। यदि विरोधी की शक्ति को बिना जाँचे हुए तत्काल टूट पड़ते तो न जाने क्या अनर्थ हो जाता।

आप समाज में अपने आस-पास कई बार ऐसी परिस्थिति को देखते ही होंगे। यहाँ भी लेखक ने स्पष्ट किया है कि यदि कोई सुने कि उसका शत्रु बीस-पच्चीस लोगों को साथ

लेकर उस पर आक्रमण करने के लिए आ रहा है तो वह तुरंत ही बिना सोचे-समझे क्रोध में दाँत पीसते हुए यदि उन सभी का सामना करने के लिए मैदान में आ जाता है तो उसके मारे जाने में कोई संदेह नहीं रह जाता। अतः कार्य-कारण के संबंध को बिना सोचे उपयुक्त स्थिति में क्रोध पर काबू रखना बहुत ज़रूरी हो जाता है।

अधिकतर क्रोध करने वाला व्यक्ति अपनी कमी की ओर न देख, दूसरे यानी विपक्षी की गलती को ही बढ़ा-चढ़ाकर देखता है। ऐसे में भी उसे अपने क्रोध के परिणाम का ध्यान नहीं रहता है। अतः क्रोध के मूल उद्देश्य को पहले समझना चाहिए। व्यक्ति, क्रोध दो कारणों से करता है–पहला, वह विपक्षी को डरा सकेः दूसरा, उससे क्षमा याचना या पश्चात्ताप करवा सके। अपने शत्रु की क्रोधपूर्ण चेष्टाओं को देखकर कई बार विपक्षी भयभीत होते हुए दिखाई दिए हैं। कई बार क्रोधी के सम्मुख उन्हें पश्चात्ताप करते भी देखा गया है। अपनी भूल के लिए वे अपने शत्रु से माफी तक माँग लेते हैं। इससे क्रोध करने वाला स्वतः उन्हें क्षमा प्रदान कर देता है। कई बार क्रोध किसी के घमंड को खत्म करने के लिए भी किया जाता है। वहाँ क्रोध करने वालों का उद्देश्य केवल अपमान करके ही अभिमानी को नम्र बनाने का होता है, जिससे अपनी वास्तविकता को वह समझ सके।

कई बार ऐसा भी देखा गया है कि क्रोधी अपने सगे संबंधियों से लड़-झगड़कर फिर अपना ही सिर फोड़ने लगता है। आपने घर में छोटे बच्चे को माँ के पीटने पर अक्सर इसी तरह क्रुद्ध होते देखा होगा। यहाँ क्रोध करने वाले बच्चे को यह मालूम है कि उसके सिर फोड़ने से माँ को उससे भी ज़्यादा कष्ट होता है। इसलिए वह स्वयं को पीड़ा पहुँचाने की बात न सोचकर माँ को दुःख देने के लिए सिर फोड़ता है। बिल्कुल ऐसा ही पत्थर से ठोकर खाने पर व्यक्ति पत्थर को ही चूर-चूर करने लगता है। यद्यपि उसे अच्छी तरह मालूम है कि पत्थर का वह कुछ नहीं बिगाड़ सकता, परंतु इससे उसका अपना क्रोध शांत हो जाता है। इसी तरह के एक और उदाहरण द्वारा भी लेखक ने क्रोध को शांत करने की बात स्पष्ट की है। चाणक्य अपने विवाह की धुन में प्रसन्न वदन जा रहे थे कि उसकी इस प्रसन्नता में सूखी घास ने पैरों में चुभ कर बाधा डाली। फिर क्या था? चाणक्य ने क्रोध में आकर अपने मूल उद्देश्य विवाह को भुला दिया और लगे उस सूखी घास को जड़ों से उखाड़ने। इतना ही नहीं, यह घास फिर पैदा न हो जाए इसके लिए उन्होंने उसकी जड़ों को गलाने के लिए उसमें मट्ठा भी डालना शुरू कर दिया। इस प्रकार का क्रोध भला किसको डराने, किससे क्षमा-याचना करवाने या किससे बदला लेने के लिए किया गया था। ऐसा क्रोध तो मनुष्य के दिमागी हाल में अव्यवस्था या असंतुलन उत्पन्न होने पर ही हो सकता है। इसका कोई लाभ नहीं, कोई कारण नहीं और न इससे किसी भी प्रकार सफलता की प्राप्ति हो सकती है।

क्रोध में कभी घृणा और कभी दया का भाव भी मिला होता है। उदाहरण देते हुए लेखक ने स्पष्ट किया है कि कोई अत्याचारी यदि किसी अबला को सता रहा है तो देखने वाले के हृदय में अबला के प्रति दया और अत्याचारी के प्रति घृणा का सम्मिलित भाव देखा जाता है। यहाँ अबला का संकट धन देकर दूर नहीं किया जा सकता अपितु उस कष्ट को दूर करने के लिए अत्याचारी का दमन ज़रूरी है जो

क्रोध से ही संभव हो सकता है। क्रोध संक्रामक रोग की तरह भी होता है। अपने ऊपर क्रोध करते देखकर दूसरे का भी अपने मनोभावों पर कोई काबू नहीं रहता। इसीलिए क्रोध शांति को समाप्त करने वाला मनोविकार माना जाता है।

धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र में ही नहीं अपितु सभ्य समाज में भी क्रोध पर संयम करने का उपदेश दिया जाता है। गीता में भगवान कृष्ण ने क्रोध से बुद्धिनाश और बुद्धि के नष्ट हो जाने पर व्यक्ति के नष्ट हो जाने की बात स्पष्ट की है। कबीर और तुलसी आदि कवियों ने भी क्रोध को बुरा कहा है:

जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप!
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ छमा तहँ आप।।

आपको पहले भी बताया गया है कि आततायियों को दबाने के लिए, समाज-सुधार के लिए, लोगों के कष्टों को दूर करने के लिए किया गया क्रोध समाज के लिए उपयोगी ही नहीं जरूरी भी है।

क्रोध पर संयम धन और धर्म दोनों को मानने वाले कराते हैं। आपने स्वयं देखा होगा कि कई ठग या स्वार्थी क्रोध करने पर भी शांत बने, अपने धन बटोरने के चक्कर में क्रोध को पचा जाते हैं अर्थात् उन पर क्रोध का कोई असर ही नहीं पड़ता। कठोर से कठोर बात पर वह कोई बदला नहीं लेते क्योंकि उन्होंने अपने स्वार्थ अर्थात् धन ऐंठने के लिए क्रोध पर काबू कर लिया होता है। ऐसा संयम समाज में उपयुक्त नहीं समझा जाता क्योंकि यहाँ व्यक्ति लालची होता है जो धर्म का लक्षण नहीं है। हाँ, धर्मपरायण व्यक्ति यदि दूसरों को सुख पहुँचाने के लिए शांत रहता है तो क्रोध संयम की श्रेणी में आता है, अन्यथा नहीं।

क्रियाकलाप-2

26.4 **26.5** **26.5**

उपर्युक्त चित्रों को देखकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. निषाद पर वाल्मीकि ने क्रोध क्यों किया?

.....

टिप्पणी

2. क्रौंच को बाणबिद्ध देखकर क्रौंची की क्या स्थिति हुई?

.....

3. इस क्रोध के परिणामस्वरूप वाल्मीकि ने कौन-सा ग्रंथ लिखा?

.....

अंश - 2

अपना और पराया दुःख दोनों क्रोध को बढ़ाने वाले हैं। इसमें अपने स्वार्थ के लिए क्रोध पर संयम ही उपयुक्त समझा गया है। इसका मुख्य कारण यही है कि दूसरे के लिए किया जाने वाला क्रोध तो दूसरे के दुःख से व्याकुल होने पर ही होता है। जो सगे-संबंधियों या मित्रों के लिए किए गए क्रोध से भी उत्तम कोटि का माना जा सकता है। ऐसे ही क्रोध का उदाहरण काव्य-जगत का जगमगाता रत्न 'रामायण' है, जिसकी रचना आदिकवि वाल्मीकि ने की थी। व्याध द्वारा क्रौंच पक्षी को मारने पर वाल्मीकि के मुख से क्रोधरूपी काव्यधारा बह निकली थी जिससे आगे चलकर 'रामायण' की रचना हुई। यहाँ वाल्मीकि ने बिना किसी भेद-भाव के कल्याण के लिए व्याध को शाप दिया जो व्याध की कठोरता का दंड और साहित्य का अनूठा ग्रंथ बना। इसी प्रकार शिशुपाल के अत्याचार जब सीमा पार कर गए तो श्रीकृष्ण को क्रुद्ध होकर उसे दंडित करके, समाज के कल्याण का बीड़ा उठाना पड़ा। इन दोनों ही परिस्थितियों में क्षमा अपनी सीमा समाप्त कर चुकी थी। उस समय यदि ऐसा न किया जाता तो समाज में निराशा और अत्याचार का बोलबाला बढ़ता ही चला जाता। आशा और उत्साह सदा के लिए समाप्त हो जाते। इन परिस्थितियों में धर्म के उद्धार के लिए, पवित्र भावों की रक्षा के लिए, अन्याय का विरोध करना ज़रूरी हो जाता है। ऐसा क्रोध धर्म में विश्वास को बढ़ाता है। संसार में शांति की स्थापना करता है। अतः इस प्रकार के क्रोध को पवित्र या पावन क्रोध की संज्ञा दी गई है। राम और कृष्ण ने ऐसा ही कालाग्निसदृश अर्थात् मृत्यु के समान भयंकर क्रोध कर तत्कालीन समाज की रक्षा की थी।

क्रोध करने पर दंड देना ज़रूरी हो जाता है। यह भी दो प्रकार का होता है—राजदंड और लोकदंड। राजदंड में यदि अधिकारवश कुछ लोग दंड देते हैं; जो न्याय के विरुद्ध हो सकता है, यह उपयुक्त नहीं क्योंकि कुछ लोगों से डरकर, अधिक शक्तिशाली बनने के कारण क्रोधवश दिया गया यह दंड कभी सात्विक नहीं हो सकता। जब लोककोप अर्थात् जनता का क्रोध होने पर दंड दिया जाता है, तब वह धर्मप्रधान और आदर्श की रक्षा करने वाला होता है।

आपने देखा होगा कि कई बार हम क्रोध का जवाब नहीं देते क्योंकि क्रोध करने वाला कोई बड़ा व्यक्ति है या समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बना बैठा है अथवा बहुत धनी है। हम किसी भी तरह से उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते, मुकाबला भी नहीं कर सकते। तब हम क्रोध को अपने भीतर दबा देते हैं, परंतु जब हम लगातार क्रोध को दबाते चले जाते हैं तो यही क्रोध 'वैर' का रूप धारण कर लेता है। इसलिए लेखक ने इस वैर को क्रोध का अचार या मुरब्बा कहा है। जिस तरह अचार और मुरब्बा धीरे-धीरे पककर

स्वादिष्ट होता है, बनाते ही उसे नहीं खाया जाता, कुछ समय के बाद ही वह रसीला बनता है। उसी प्रकार यह क्रोध भी लगातार दबाए जाने के कारण क्रोध करने वाले व्यक्ति को पीड़ित करने का अवसर ढूँढ़ता रहता है। जिसे लेखक ने वैर का नाम दिया जिसमें व्यक्ति की यादें जमा होती रहती हैं और उचित अवसर आने पर वह लक्ष्य को अपना निशाना बना लेता है। यहाँ क्रोध का बाहरी वेग भले ही शांत दिखाई दे परंतु मौका आने पर वह अपने लक्ष्य को पीड़ित करने में चूकता नहीं है। लेखक ने उदाहरण देकर स्पष्ट किया है कि यदि कोई व्यक्ति हमें गाली दे और हम तुरंत उसका जवाब गाली अथवा थप्पड़ से देते हैं तो यह हमारा क्रोध है परंतु यदि हम उसी समय गाली देने वाले का कुछ बिगाड़ नहीं सकते या वह भाग जाता है तो यह क्रोध हमारी स्मृति में धारण अर्थात् भावों को जमा करने की शक्ति के रूप में विद्यमान हो जाता है और अवसर पाते ही वैर के रूप में निकलता है। इस तरह क्रोध जमा होकर अंदर-ही-अंदर वैर का रूप धारण कर लेता है। लेखक ने यहाँ यह भी स्पष्ट कर दिया है कि छोटे बच्चे और पशु अपनी इसी स्मृति या धारणा शक्ति के न होने के कारण वैर नहीं रखते। जैसा कि आप मानते हैं छोटे बच्चों की लड़ाई में कभी-कभी माता-पिता जानी दुश्मन बन जाते हैं जबकि बच्चे फिर वैसे ही परस्पर खेलने लगते हैं। ईंट और पत्थर के जवाब की ही तरह चूहे और बिल्ली का वैर भी कवियों ने आलंकारिक रूप में प्रयुक्त किया है। यह उनकी वास्तविक वैर की शक्ति के कारण नहीं है, यहाँ तो यह दोनों जीव परस्पर भोज्य हैं अर्थात् बिल्ली का खाद्य चूहा है। यहाँ यह वैर के कारण नहीं है।

क्रोध के उग्र रूपों की जानकारी पा लेने के बाद लेखक ने इस क्रोध के हल्के रूप को भी यहाँ समझाने की कोशिश की है। क्रोध का एक हल्का रूप चिड़चिड़ाहट है। आपने देखा होगा कि किसी विशेष धर्म या मत को मानने वाले लोग किसी दूसरे मतावलंबी की बात सुनना ही नहीं चाहते। इसका कारण उनकी कट्टरता ही हो सकती है, क्योंकि बिना सुने ही वह उसे नकार देते हैं। उसको यदि हानि नहीं पहुँचा सकते तो कुछ बोल कर अपना विरोध प्रकट कर दिया करते हैं। ऐसे व्यक्ति केवल बोलने तक ही अपना मतभेद स्पष्ट करते हैं। कुछ बूढ़े 'सीताराम' या 'राधेश्याम' शब्द से चिढ़ते देखे गए हैं। इसका मूल कारण उनका अपने किसी मत या संप्रदाय अथवा संस्था के प्रति ऐसा लगाव है कि वह दूसरों के मत, संप्रदाय या संस्था के नाम मात्र को सुनने से चिढ़ जाते हैं। कई बार तो वह छोटे बच्चों के उपहास का कारण भी बन जाते हैं। कुछ वृद्ध 'करेले' के नाम लेने भर से चिड़चिड़ा उठते हैं। आपने विदूषक का नाम ज़रूर सुना होगा या फिर सर्कस में जोकर की भूमिका अदा करने वाले व्यक्ति को भी देखा होगा जो कभी अपने हाव-भावों से दर्शकों का मनोरंजन करते हैं तो कभी अपने बौनेपन से दर्शकों का मन मोह लेते हैं।

पाठगत प्रश्न 26.1

निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर के सामने सही का निशान (√) लगाइए।

1. वैर की संभावना होती है–
   (क) पशुओं और बच्चों में।
   (ख) चूहे और बिल्ली के संबंध में।

(ग) भावों के संचय की क्षमता रखने वालों में।

(घ) पीड़ित करने वाले को तुरंत दंड देने वालों में।

2. चिड़चिड़ाहट बहुत बढ़ जाए तो–

(क) मनोरंजक हो जाती है।

(ख) खतरनाक हो जाती है।

(ग) वैर का रूप ले लेती है।

(घ) क्रोध को शांत कर देती है।

3. केवल 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए :

(क) क्रोध सदैव धोखा दे सकता है। ( )

(ख) क्रोध पर विवेक के अंकुश का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ( )

(ग) राजकोप प्रजा के हित के लिए किया जाता है। ( )

(घ) क्रोधपूर्ण मुख-मुद्राओं का पहला लक्ष्य विरोधी को डराना-धमकाना होता है। ( )

(ङ) क्रुद्ध यदि अपना सिर फोड़ता है तो यह भी दूसरे को कष्ट दे सकता है। ( )

4. निम्नलिखित कथनों में सही उत्तर पर (√) तथा गलत उत्तर पर (X) का निशान लगाइए।

(क) चाणक्य ने कुशा को उखाड़ कर उनकी जड़ों में मट्ठा डाला। ( )

(ख) क्रुद्ध का लक्ष्य दूसरे को बिना कारण दुख पहुँचाना ही होता है।( )

(ग) संत खलों के वचन सदा सहन करते हैं। ( )

(घ) दंड कोप का एक विधान है। ( )

अंश - 3

उपसंहार

अब तक आप क्रोध के मूल रूप, कारण और क्रोध पर संयम की आवश्यकता से भली-भाँति परिचित हो चुके हैं। निबंध के अंत यानी उपसंहार या समाप्ति पर आते-आते लेखक ने क्रोध आने के सभी कारणों और उनके प्रकट न कर सकने की असमर्थता को 'अमर्ष' नाम दिया है। आइए, इस अमर्ष की विशेष जानकारी प्राप्त करें।

मुख्यतः दूसरे पर क्रोध बढ़ने के क्रमशः तीन कारण होते हैं–पहला हमें किसी की बात बुरी लगी हो। दूसरा वह बात बुरी लगने के कारण सहन न होती हो और तीसरा सहन न होने की स्थिति में वह दुःखयुक्त क्रोध व्यक्ति के अंदर ही जमा हो जाए।

क्रमशः इन तीनों स्थितियों के बाद जो क्रोध की अवस्था होती है उसे 'अमर्ष' कहते हैं। यह अमर्ष वस्तुतः वह दुःख या द्वेष है, जो विपक्षी या शत्रु का कोई उपकार अथवा

बुरा न कर सकने के कारण पैदा होता है। उसमें व्यक्ति का ध्यान लगातार दुःख पहुँचाने वाले की ओर ही लगा रहता है जिससे उसकी सहनशीलता भी खत्म होती चली जाती है। वह विपक्षी के शक्तिशाली, अधिक प्रभावशाली अथवा बहुत समृद्ध होने के कारण उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकता तो अपने क्रोध को केवल कठोर शब्दों में ही व्यक्त कर अपनी भड़ास या गरमी निकाल लेता है। उचित अवसर प्राप्त होने पर वह उसे पूरी तरह बरबाद कर सकता है।

इस प्रकार लेखक ने दैनिक जीवन में विभिन्न अवसरों पर पैदा होने वाले क्रोध, उसके प्रकट करने के तरीके, उससे होने वाली हानियाँ, उससे होने वाले समाज के हित तथा क्रोध के विभिन्न रूपों के मनोवैज्ञानिक वर्णन कर क्रोध पर विवेक का संयम रखने की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है ताकि क्रोध के अंधेपन में व्यक्ति अपना संतुलन ही न खो बैठे।

पाठगत प्रश्न 26.2

दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनिए–

1. किसी बात का बुरा न लगना, उसकी असह्यता का क्षोभयुक्त और आवेगपूर्ण अनुभव होना–
   (क) वैर कहलाता है। (ग) प्रतिकार कहलाता है।
   (ख) चिड़चिड़ाहट है। (घ) अमर्ष कहलाता है।
2. क्रोध की वह अवस्था सबसे सुंदर है जिसमें मनुष्य–
   (क) पत्थर को चूर-चूर करने लगता है।
   (ख) अपना सिर फोड़ने लगता है।
   (ग) दुःख अपना है या पराया–इस ज्ञान से मुक्त रहता है।
   (घ) 'राधेश्याम' कहने मात्र से ही चिढ़ता है।
3. उपयुक्त शब्द या मुहावरे से रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिएः
   (क) मैं तुम्हें.....में मिला दूँगा।
   (ख) मैं तुम्हारी .....खोदकर फेंक दूँगा।
   (ग) अब तक तो मैं.....आया, अब नहीं रह सकता।
   (घ) मैं तुम्हारा .....नोंच लूँगा।
   (ङ) कभी-कभी लोग क्रोध में अपना .....पटक देते हैं।

26.4 भाषा-शैली

आधुनिक काल के प्रसिद्ध निबंधकार और समीक्षक पंडित रामचंद्र शुल्क ने इस विचारात्मक निबंध की रचना की है। शुल्क जी की भाषा गंभीर, तत्समनिष्ठ, साहित्यिक

और प्रभावोत्पादक है। विषय के अनुरूप लेखक ने इस निबंध में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक किया है, जैसे – साक्षात्कार, मनोविकार, आविर्भाव, विवेक, अंकुश, परदुःखकातरता, चिरनिवृत्ति, निर्विशेषता आदि। परंतु विषय के अनुकूल देशज और विदेशी शब्दों, जैसे – मुरब्बा, चिड़चिड़ाहट, फुर्तीला, दुनियादार, मट्ठा, तमाचा आदि को भी सहज ही स्वीकार किया है। भाषा की सबसे बड़ी विशेषता समासयुक्त और संधियुक्त होना है, जैसे मनोविकार, परपीड़कोन्मुख, आविर्भाव आदि शब्दों के साथ ही वह विभिन्न उपसर्गयुक्त शब्दों का प्रयोग भी सहज ही कर देते हैं, जैसे–प्रतिकार, परिज्ञान, अनन्य आदि।

आप जानते हैं कि निबंध के अनेक प्रकार होते हैं, इनमें से प्रमुख हैं–वर्णनात्मक, भावात्मक और विचारात्मक। आवश्यकतानुसार इनमें अलग-अलग शैलियों का उपयोग किया जाता है। वर्णनात्मक निबंध में बात को फैलाकर कहा जाता है, इसलिए इसे व्यास शैली में लिखा जाता है। भावात्मक निबंध में भावुकता के तत्त्व के कारण तरंग और विक्षेप शैली होती है। विचारात्मक निबंध गंभीर होता है। उसमें अधिकतर सूत्र-शैली का प्रयोग किया जाता है। सूत्र-शैली का अर्थ है – अत्यधिक सार या संक्षिप्त रूप में विचार प्रस्तुत करना। देखने में तो वह वाक्य छोटा लगता है, लेकिन उसमें बहुत बड़ी बात या घटना छिपी होती है। 'क्रोध' में इस शैली को आप अनेक स्थानों पर देख सकते हैं। छोटे-छोटे अर्थगर्भित वाक्यों में गागर में सागर भरने का शुक्ल जी का प्रयास सचमुच प्रशंसनीय है, जैसे–

1. क्रोध शांति भंग करने वाला मनोविकार है।
2. क्रोध वैर का अचार या मुरब्बा है।
3. दंड कोप का एक विधान है।

इतना ही नहीं विभिन्न ऐतिहासिक तथा पौराणिक अनुक्रियाओं को पिरोकर लेखक ने क्रोध निबंध की रोचकता और उपयोगिता को बढ़ा दिया है, जैसे–वाल्मीकि की रामायण की रचना, श्रीकृष्ण का शिशुपाल-वध और श्रीराम का रावण और बालि-वध आदि। इसी के साथ-साथ दैनिक जीवन में घटित होने वाली छोटी-छोटी महत्त्वहीन घटनाओं को लेकर क्रोध की प्रासंगिकता को स्पष्ट करना भी शुक्ल जी की भाषा-शैली की विशेषता ही है, जैसे रेल पर सवार व्यक्तियों को तमाचा मारना, 'राधेश्याम' या 'सीताराम' कहने मात्र से किसी का चिढ़ना तथा प्रयास करने पर भी चूल्हा न जलने पर ब्राह्मण देवता का क्रुद्ध होकर आग में पानी डालना। ये प्रसंग हमारे दैनिक जीवन में घटित होते रहते हैं।

शुक्ल जी ने इस निबंध में लोक प्रचलित मुहावरों का प्रयोग कर इसमें प्रवाह और प्रभाव का विशेष संचार किया है। एक ही वाक्य में दो-तीन मुहावरों का प्रयोग दर्शनीय है–'जब कोई दाँत पीसता और गरजता हुआ यह कहने लगे, कि मैं तुम्हें धूल में मिला दूँगा।'

इस तरह के वाक्यों से हमारे सामने एक क्रोधी का चित्र-सा खिंच जाता है। अन्यत्र भी लेखक ने टेढ़ी-सीधी सुनाना, सिर पटकना, किनारे होना तथा ऊँची-नीची पचाना

टिप्पणी

आदि मुहावरों का बड़ी कुशलता पूर्वक प्रयोग किया है, जिससे विषय में गंभीरता के साथ-साथ हास्य-व्यंग्य की छटा पाठक को मोह लेती है।

हिंदी भाषा में मुख्यतः दो प्रकार से शब्दों की रचना की जा सकती है– पहली हैं **उपसर्ग** द्वारा और दूसरी **प्रत्यय** द्वारा। जब मूल शब्द से पहले कुछ जोड़ देते हैं तो उसे 'उपसर्ग' कहते हैं। जब मूल शब्द के बाद कुछ जोड़कर नया शब्द बना देते हैं तो उसे 'प्रत्यय' कहते हैं।

संस्कृत में 'अ' और 'अन्' उपसर्ग, शब्दों के प्रारंभ में जोड़कर विपरीतार्थक शब्द बना लिए जाते हैं, जिनका नियम बहुत स्पष्ट है। आज हिंदी में इन दोनों उपसर्गों का प्रयोग स्वीकार्य है–

'अ' – जब कोई शब्द व्यंजन से प्रारंभ हो। इस पाठ में ही निम्नलिखित शब्द इस प्रकार के हैं।

अपरिचित = अ + परिचित (जो परिचित नहीं है)

अपरिष्कृत = अ + परिष्कृत (जो परिष्कृत नहीं है)

अव्यवस्था = अ + व्यवस्था (जहाँ व्यवस्था नहीं है)

अन् – जब कोई शब्द स्वर से प्रारंभ हो। इस पाठ में ही निम्नलिखित शब्द इस प्रकार हैं:

अनर्थ = अन् + अर्थ (जिसका अर्थ नहीं है, अर्थ का विपरीतार्थक)

अनुचित = अन् + उचित (जो उचित नहीं है)

टिप्पणी : हिंदी का 'अन' उपसर्ग भी विपरीत अर्थ देने के लिए हिंदी के शब्दों में लगाया जाता है।

अनपढ़ = अन + पढ़ (जो पढ़ा नहीं है)

अनजान = अन + जान (जिसको जानते नहीं है)

'अभि' – अधिकता लाने के लिए इस उपसर्ग का प्रयोग किया जाता है। इस पाठ में प्रयुक्त यह शब्द देखिए–

अभिमान = अभि + मान (जिसमें अधिक मान या घमंड है)

आजकल वैशिष्ट्य लाने के लिए इसका प्रयोग किया जा रहा है:

रक्षा = अभिरक्षा (विशेष रूप से की गई रक्षा)

भाषण = अभिभाषण (सामान्य भाषण से विशेष)

इसी प्रकार शब्द के अंत में किसी प्रत्यय को लगाकर नया शब्द बना दिया जाता है।

विशेषण से भावात्मक संज्ञा बनाने के लिए दो प्रत्यय हैं–

-ता = मानव+ता = मानवता

पाठ में आए हुए इस प्रकार के शब्द हैं– कठोरता, कायरता, शिथिलता, निर्विशेषता आदि।

-पन = लड़का + पन = लड़कपन

(स्पष्ट है कि 'लड़का' का अंत दीर्घ रूप ह्रस्व)

इसी प्रकार का अन्य शब्द है:

बच्चा + पन = बचपन

इसी प्रकार के अन्य शब्द हैं–अंधापन, खट्टापन, कठोरपन आदि।

जीविकावाचक/पेशा स्पष्ट करने के लिए

- **'दार'** प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है; जैसे जमीं (जमीन) + दार = जमींदार

अन्य शब्द हैं– खबरदार, चौकीदार आदि।

पाठगत प्रश्न 26.3

दिए गए विकल्प में से उचित विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

1. निम्नलिखित में से कौन-सा शब्द विदेशी शब्द है–

   (क) प्रतिकार (ग) आँख

   (ख) फुर्तीला (घ) आविर्भाव

2. निम्नलिखित में से किस शब्द में विसर्ग संधि नहीं है–

   (क) मनोविकार (ग) पश्चात्ताप

   (ख) दुर्व्यवहार (घ) आविर्भाव

3. निम्नलिखित में से किस शब्द में प्रत्यय लगा है–

   (क) आलंबन (ग) चिड़चिड़ाहट

   (ख) अव्यवस्था (घ) मनोविकार

4. निम्नलिखित में से किस शब्द में उपसर्ग नहीं है–

   (क) अधिकतर (ग) प्रतिकार

   (ख) अनर्थ (घ) अपरिचित

5. निम्नलिखित में से किस वाक्य में मुहावरे का प्रयोग है–

   (क) क्रोध दुःख के चेतन कारण के साक्षात्कार से उत्पन्न होता है।

   (ख) क्रोध वैर का अचार या मुरब्बा है।

   (ग) तुमने मुझे समझा क्या है! मैं तुम्हें धूल में मिला दूँगा।

   (घ) मूर्खता मूर्ख को चाहे रुलाए, पर दुनिया को तो हँसाती ही है।

26.5 भाषा-प्रयोग

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए:

1. सामाजिक जीवन में क्रोध की ज़रूरत बराबर *पड़ती है।*

2. वह चट मट्ठा और कुदाली लेकर पहुँचा **और** कुशों को उखाड़कर उनकी जड़ों में मट्ठा देने *लगा।*

3. यदि आपने उसी समय मार दिया तो आपने क्रोध किया।

- वाक्य 1 में एक ही क्रिया है जो कर्त्ता पद 'क्रोध की ज़रूरत' से जुड़ी है। इसे **'सरल वाक्य'** कहते हैं।
- वाक्य 2 में दो स्वतंत्र वाक्य हैं, उन्हें 'और' योजक से संयुक्त किया गया है। इसे **'संयुक्तवाक्य'** कहा जाता है।
- तीसरे वाक्य में दो क्रियापद है और दो वाक्यांश भी, पर एक वाक्यांश मुख्य अर्थ दे रहा है (आपने क्रोध किया), दूसरा पहले वाक्यांश की शर्त बता रहा है और पहले के आश्रित है, ऐसे वाक्यों को **'मिश्र वाक्य'** कहा जाता है।

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए और पहचान कर उनका भेद सामने लिखिए:

1. क्रोध सब मनोविकारों से फुर्तीला है। .....
2. क्रोध कभी दया के साथ-कूदता है और कभी घृणा के ....
3. अभिमान दूसरों के मन में या उसकी भावना में बाधा डालता है .....
4. यह कठोरता ऐसी कठोरता को भंग करने के लिए होती है, जो पिघलने वाली नहीं होती। .....
5. वैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है। .....
6. राजदंड कोप है और लोककोप धर्मकोप है। .....
7. जिसे अति से अधिक सावधान रहना चाहिए वही कुछ भी नहीं करता। .....
8. काम क्रोध करता है पर नाम दया का ही होता है। .....

- सरल, संयुक्त, मिश्र वाक्यों को एक-एक उदाहरण लिखिए:

सरल वाक्य : .....

संयुक्त वाक्य : .....

मिश्र वाक्य : .....

26.6 आपने क्या सीखा

1. क्रोध मनुष्य के हृदय में स्थित वह भाव है जो दूसरे द्वारा सताए जाने पर या इच्छा के अनुकूल काम न करने पर या अपने-पराए की भावना उत्पन्न होने पर स्वतः ही पैदा होता है।
2. क्रोध की आवश्यकता लोकहित के लिए भी होती है। ऐसी स्थिति में अक्सर वह साहित्य का रूप ले लेता है।

टिप्पणी

3. क्रोध कभी-कभी घातक भी सिद्ध होता है। इससे बनते काम बिगड़ जाते हैं, क्रोध करने से मानसिक शांति भंग हो जाती है, ऐसे समय मानसिक संतुलन बनाए रखना अति आवश्यक हो जाता है। किसी भी प्रकार से क्रोध पर नियंत्रण रखना चाहिए।
4. क्रोध जब किसी कारणवश प्रकट नहीं हो पाता तो वैर का रूप ले लेता है। शुक्ल जी ने इसे अचार या मुरब्बा कहा है। इस प्रकार के क्रोध भाव का संचयन बच्चों तथा जानवरों में नहीं होता, अतः उनमें वैर-भाव नहीं होता।
5. संपूर्ण निबंध में तत्समनिष्ठ शैली और प्रवाहपूर्ण मुहावरों का सार्थक प्रयोग हुआ है।
6. पारिभाषिक और सूक्तिमय वाक्यावलि का प्रयोग, जैसे–*'क्रोध शांति भंग करने वाला मनोविकार है।', 'वैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है।', 'दंड कोप का ही एक विधान हैं।,' 'मैं तुम्हें धूल में मिला दूँगा।'*
7. शब्द-रचना मुख्यतः दो प्रकार से होती है–पहली उपसर्ग जोड़कर और दूसरी प्रत्यय जोड़कर, जैसे–**अन**जान, **ना**समझ (उपसर्ग), पान**दान**, समझ**दार** (प्रत्यय)।

26.7 योग्यता विस्तार

(क) लेखक परिचय

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती ज़िले के अगोना गाँव में हुआ था। उत्तर प्रदेश में ही उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई। सन् 1910 में काशी नागरी प्रचारणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिंदी शब्दकोश' निर्माण में सहायक संपादक के पद पर कार्य कर शुक्ल जी ने अपनी हिंदी योग्यता की अमिट छाप छोड़ी।

सर्वप्रथम आपने हिंदी साहित्य का इतिहास लिखा, जो आज भी प्रामाणिक है। इसके अतिरिक्त आपकी अनेक रचनाएँ हैं– जायसी ग्रंथावली की भूमिका, सूरदास, तुलसीदास तथा चिंतामणि (कई भागों में)। चिंतामणि आलोचनात्मक, साहित्यिक और विचार प्रधान मनोवैज्ञानिक निबंधों का संग्रह है। 'क्रोध' निबंध आपकी पुस्तक 'चिंतामणि' संकलन से ही लिया गया है।

शुक्ल जी की भाषा-शैली की विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

1. प्रवाहपूर्ण, विचारप्रधान, तत्समनिष्ठ भाषा।
2. क्रमबद्धता और विचारों की एकसूत्रता, जैसे–*'क्रोध का वैर से अमर्ष की ओर क्रमशः बढ़ना।'*
3. विभिन्न उदाहरणों को देकर विषय को समझाने का प्रभावपूर्ण तरीका, जैसे– *''यात्रियों का परस्पर तमाचा मारना'', 'चाणक्य का कुश चुभने पर उसकी जड़ों को उखाड़ना'* आदि।

संक्षेप में कहा जा सकता है, उनकी भाषा-शैली उनके व्यक्तित्व की छाप छोड़ती है।

(ख) क्रोध स्थायी भाव से रौद्र रस की उत्पत्ति होती है। हिंदी साहित्य में नौ रस और उनके स्थायी भाव निम्नलिखित प्रकार से हैं।

रस	**स्थायीभाव**
शृंगार	रति

हास्य	हास
वीर	उत्साह
करुण	शोक
भयानक	भय
बीभत्स	घृणा
अद्भुत	विस्मय
शांत	निर्वेद/शम
रौद्र	क्रोध

साहित्य में वर्णित इन नौ रसों के नाम तथा स्थायी भाव याद कीजिए।

26.8 पाठांत प्रश्न

1. क्रोध की आवश्यकता क्यों पड़ती है?
2. क्रोध करने से क्या हानि हो सकती है?
3. शुल्कजी ने क्रोध को अंधा क्यों कहा?
4. क्रोध वैर में कैसे बदल जाता है?
5. बच्चों और पशुओं में वैर क्यों नहीं होता?
6. राजकोप और लोककोप में क्या अंतर है?
7. चिड़चिड़ाहट विनोद की सामग्री कैसे हो सकती है?
8. अमर्ष को क्रोध का असहाय रूप क्यों माना जाता है?
9. पाठ से पाँच मुहावरे छाँटिए तथा उनका अपने वाक्यों में ठीक-ठीक प्रयोग कीजिए।
10. निम्नलिखित अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए।
    (क) सामाजिक जीवन में क्रोध .....प्रभाव नहीं।
    (ख) क्रोध सब मनोविकारों .....कभी घृणा के।
    (ग) जिस क्रोध के त्याग .....दिखाई देगा।

26.9 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (ग) 2. (घ) 3. (ग) 4. (क) त्रुटि (ख) क्रोध (ग) भंग करने वाला (घ) अर्थपरायण, धर्मपरायण
5. (ख) 6. (क) 7. (ग)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

26.1 1. (ग)
2. (क)
3. (क) नहीं (ख) नहीं (ग) हाँ (घ) हाँ (ङ) हाँ
4. (क) √ (ख) X (ग) √ (घ) √

26.2 1. (घ) 2. (ग)
3. (क) धूल/मिट्टी (ख) जड़ें (ग) सहता (घ) मुँह (ङ) सिर

26.3 1. (ख) 2. (ग) 3. (ग) 4. (क) 5. (ग)